Chapter आठ

भगवान् कपिलदेव से सगर-पुत्रों की भेंट

इस अध्याय में रोहित के वंशजों का वर्णन मिलता है। रोहित के वंश में सगर नाम का एक राजा हुआ जिसकी कथा कपिलदेव तथा सगर के पुत्रों के विनाश के सम्बन्ध में वर्णित है।

रोहित का पुत्र हरित के नाम से जाना जाता था। हरित का पुत्र चम्प था जिसने चम्पापुरी नगरी का निर्माण कराया। चम्प का पुत्र सुदेव था, सुदेव का पुत्र विजय हुआ जिसका पुत्र भरुक था। भरुक का पुत्र वृक था। वृक का पुत्र बाहुक अपने शत्रुओं के कारण अत्यन्त क्षुब्ध था; अतएव उसने अपनी पत्नी सहित अपना घर छोड़ दिया और दोनों जंगल में चले गये। जब वहाँ उसकी मृत्यु हो गई तो उसकी पत्नी ने अपने पति के साथ सती होना चाहा, किन्तु जब वह मरने जा रही थी तो और्व नामक मुनि ने देखा कि वह गर्भवती है; अतएव उस मुनि ने उसे सती होने से मना किया। इस पत्नी की सौतों ने उसे भोजन के साथ विष खिला दिया, किन्तु फिर भी उसका पुत्र विष के साथ पैदा हुआ। इसलिए यह पुत्र सगर कहलाया *स*—सहित तथा *गर*—गरल (विष)। मुनि और्व के आदेशों का पालन करते हुए राजा सगर ने यवन, शक, हैहय तथा बर्बर जातियों का उद्धार किया। राजा ने इन सब जातियों का वध नहीं किया अपितु उनका सुधार किया। सगर ने और्व के आदेशों के अनुसार अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न किये, किन्तु इस यज्ञ के लिए जिस घोड़े की आवश्यकता थी उसे इन्द्र ने चुरा लिया। राजा सगर के दो पत्नियाँ थीं—सुमति तथा केशिनी। इस घोड़े की खोज करते हुए सुमति के पुत्रों ने पृथ्वी की सतह बहुत दूर तक खोद डाली और इस तरह एक खाई बन गई जो बाद में सागर कहलायी। इस खोज के दौरान उनकी भेंट महापुरुष कपिलदेव से हुई। उन्होंने सोचा कि इसी व्यक्ति ने घोड़े को चुराया है। ऐसे अपराधपूर्ण विचार से उन्होंने उन पर आक्रमण कर दिया किन्तु वे सभी जलकर क्षार हो गये। राजा सगर की द्वितीय पत्नी केशिनी के एक पुत्र था जिस का नाम असमञ्जस था जिसके पुत्र अंशुमान ने बाद में घोड़े की खोज की और अपने चचेरे भाइयों को छुड़वाया। कपिलदेव के पास जाकर अंशुमान ने देखा कि एक ओर यज्ञ का घोड़ा है और दूसरी ओर राख का ढेर है। अंशुमान ने कपिलदेव की स्तुति की। इससे प्रसन्न होकर कपिलदेव ने उसका घोड़ा लौटा दिया। किन्तु घोड़ा वापस पाने के बाद भी अंशुमान कपिलदेव के समक्ष खड़ा रहा। कपिलदेव समझ गये कि अंशुमान अपने

पितरों के उद्धार के लिए प्रार्थना कर रहा है। इस प्रकार कपिलदेव ने उन्हें बताया कि वे गंगा के जल से उद्धार पा सकते हैं। तब अंशुमान ने कपिलदेव को सादर नमस्कार किया, उनकी प्रदक्षिणा की और घोड़ा लेकर यज्ञस्थल की ओर कूच किया। राजा सगर ने यज्ञ समाप्त करने के बाद अपना राज्य अंशुमान को सौंप दिया और और्व के उपदेशों का पालन करते हुए मोक्ष प्राप्त किया।

श्रीशुक उवाच
हरितो रोहितसुतश्चम्पस्तस्माद्विनिर्मिता ।
चम्पापुरी सुदेवोऽतो विजयो यस्य चात्मजः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; हरितः—हरित नामक; रोहित-सुतः—रोहित का पुत्र; चम्पः—चम्प नामक; तस्मात्—हरित से; विनिर्मिता—बनवाया गया; चम्पा-पुरी—चम्पापुरी नामक नगर; सुदेवः—सुदेव; अतः—तत्पश्चात् (चम्प से); विजयः—विजय नामक; यस्य—जिसका (सुदेव का); च—भी; आत्म-जः—पुत्र।

शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : रोहित का पुत्र हरित हुआ और हरित का पुत्र चम्प हुआ जिसने चम्पापुरी नामक नगर का निर्माण कराया। चम्प का पुत्र सुदेव हुआ और सुदेव का पुत्र विजय था।

भरुकस्तत्सुतस्तस्माद्बृकस्तस्यापि बाहुकः ।
सोऽरिभिर्हृतभूः राजा सभार्यो वनमाविशत् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

भरुकः—भरुक नामक; तत्-सुतः—विजय का पुत्र; तस्मात्—उससे (बहक); वृकः—वृक; तस्य—उसका; अपि—भी; बाहुकः—बाहुक; सः—वह; अरिभिः—अपने शत्रुओं द्वारा; हृत-भूः—जिसकी धरती छीन ली गई है; राजा—राजा (बाहुक); स-भार्यः—पत्नी सहित; वनम्—जंगल में; आविशत्—प्रविष्ट हुआ।

विजय का पुत्र भरुक, भरुक का पुत्र वृक और उसका पुत्र बाहुक हुआ। राजा बाहुक के शत्रुओं ने उसकी सारी सम्पत्ति छीन ली जिससे उसने वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर लिया और अपनी पत्नी सहित वन में चला गया।

वृद्धं तं पञ्चतां प्राप्तं महिष्यनुमरिष्यती ।
और्वेण जानतात्मानं प्रजावन्तं निवारिता ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

वृद्धम्—वृद्ध को; तम्—उस; पञ्चताम्—मृत्यु; प्राप्तम्—प्राप्त हुए; महिषी—रानी; अनुमरिष्यती—सती होना चाहती थी; और्वेण—और्व मुनि द्वारा; जानता—समझते हुए; आत्मानम्—रानी का शरीर; प्रजा-वन्तम्—गर्भ में शिशु है; निवारिता—मना किया गया।

जब बाहुक वृद्ध होकर मर गया तो उसकी एक पत्नी उसके साथ सती होना चाहती थी। किन्तु

उस समय और्व मुनि ने यह जानते हुए कि वह गर्भवती है उसे सती होने से मना किया।

आज्ञायास्यै सपत्नीभिर्गरो दत्तोऽन्धसा सह ।
सह तेनैव सञ्जातः सगराख्यो महायशाः ।
सगरश्चक्रवर्त्यासीत्सागरो यत्सुतैः कृतः ॥ ४॥

शब्दार्थ

आज्ञाय—(यह) जानते हुए; अस्यै—गर्भवती रानी को; सपत्नीभिः—बाहुक की अन्य पत्नियों के द्वारा; गरः—विष; दत्तः—दिया गया; अन्धसा सह—उसके भोजन के साथ; सह तेन—उस विष के साथ; एव—भी; सञ्जातः—उत्पन्नहुआ; सगर-आख्यः—सगर नाम से विख्यात; महा-यशाः—अत्यन्त ख्याति वाला; सगरः—राजा सगर; चक्रवर्ती—सम्राट; आसीत्—हुआ; सागरः—गंगासागर नामक स्थान; यत्-सुतैः—जिसके पुत्रों द्वारा; कृतः—खोदा गया था।

यह जानते हुए कि वह गर्भवती थी, उसकी सौतों ने उसको भोजन के साथ विष देने की मंत्रणा की लेकिन यह फलीभूत नहीं हुई। किन्तु इस विष सहित एक पुत्र उत्पन्न हुआ जो सगर (विष सहित) कहलाया। बाद में सगर सम्राट बना। गंगासागर नामक स्थान उसके पुत्रों द्वारा खोदा गया था।

यस्तालजङ्घान्यवनाञ्छकान्हैहयबर्बरान् ।
नावधीद्गुरुवाक्येन चक्रे विकृतवेषिणः ॥ ५॥
मुण्डाञ्छ्मश्रुधरान्कांश्चिन्मुक्तकेशार्धमुण्डितान् ।
अनन्तर्वाससः कांश्चिदबहिर्वाससोऽपरान् ॥ ६॥

शब्दार्थ

यः—जो, महाराज सगर; तालजङ्घान्—तालजंघ नामक असभ्य जाति; यवनान्—वैदिक साहित्य को न मानने वाले; शकान्—अन्य नास्तिक जाति; हैहय—असभ्य; बर्बरान्—तथा बर्बरों को; न—नहीं; अवधीत्—मारा; गुरु-वाक्येन—अपने गुरु के आदेश से; चक्रे—उन्हें बनाया; विकृत-वेषिणः—बेढंगे वस्त्र पहने; मुण्डान्—सिर घुटवाये; श्मश्रु-धरान्—मूँछों वाले; कांश्चित्—उनमें से कुछ; मुक्त-केश—बिखरे बाल; अर्ध-मुण्डितान्—आधा सिर घुटवाये; अनन्तः-वाससः—बिना भीतरी वस्त्र के; कांश्चित्—उनमें से कुछ; अबहिः-वाससः—बाहरी वस्त्रों के बिना; अपरान्—अन्यों को।

सगर महाराज ने अपने गुरु और्व के आदेशानुसार तालजंघ, यवन, शक, हैहय तथा बर्बर जातियों के असभ्य लोगों का वध नहीं किया अपितु उनमें से कुछ को भद्दे वस्त्र पहनने को बाध्य कर दिया, कुछ के सिर घुटवा दिये लेकिन मूँछें रखने दीं, कुछ के बालों को खुलवा दिया, कुछ के सिर आधे घुटवा दिए, कुछ को बिना भीतरी वस्त्र के कर दिया और कुछ को निर्वस्त्र करा दिया। इस प्रकार ये जातियाँ भिन्न-भिन्न वस्त्र धारण करने के लिए बाध्य की गईं, किन्तु राजा सगर ने इन्हें मारा नहीं।

सोऽश्वमेधैरयजत सर्ववेदसुरात्मकम् ।
और्वोपदिष्टयोगेन हरिमात्मानमीश्वरम् ।
तस्योत्सृष्टं पशुं यज्ञे जहाराश्वं पुरन्दरः ॥ ७॥

शब्दार्थ

सः—उसने; अश्वमेधैः—अश्वमेध यज्ञ करके; अयजत—पूजा की; सर्व-वेद—सारे वैदिक ज्ञान का; सुर—तथा सारे विद्वान् साधुओं का; आत्मकम्—परमात्मा; और्व-उपदिष्ट-योगेन—और्व की योग विधि द्वारा; हरिम्—भगवान् को; आत्मानम्—परमात्मा को; ईश्वरम्—ईश्वर को; तस्य—उसका (सगर का); उत्सृष्टम्—बलि के निमित्त; पशुम्—बलि पशु को; यज्ञे—यज्ञ में; जहार—चुरा लिया; अश्वम्—घोड़े को; पुरन्दरः—स्वर्ग के राजा इन्द्रने।

और्व मुनि के आदेशानुसार सगर महाराज ने अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न किया और इस तरह भगवान् को प्रसन्न किया जो परम नियन्ता, समस्त विद्वानों के परमात्मा तथा सभी वेदों के ज्ञाता हैं। किन्तु स्वर्ग के राजा इन्द्र ने यज्ञ में बलि दिये जाने वाले घोड़े को चुरा लिया।

सुमत्यास्तनया दृप्ताः पितुरादेशकारिणः ।
हयमन्वेषमाणास्ते समन्तान्न्यखनन्महीम् ॥ ८॥

शब्दार्थ

सुमत्याः तनयाः—रानी सुमति से उत्पन्न पुत्र; दृप्ताः—अपने पराक्रम तथा प्रभाव से गर्वित; पितुः—अपने पिता (सगर) का; आदेश-कारिणः—आदेश का पालन करते हुए; हयम्—(इन्द्र द्वारा चुराये) घोड़े को; अन्वेषमाणाः—ढूँढते हुए; ते—वे सब; समन्तात्—सर्वत्र; न्यखनन्—खोद डाला; महीम्—पृथ्वी को।

(राजा सगर के दो पत्नियाँ थीं—सुमति तथा केशिनी)। सुमति के पुत्रों ने, जिन्हें अपने पराक्रम तथा प्रभाव पर गर्व था, अपने पिता के आदेशानुसार खोये हुए घोड़े को सर्वत्र ढूँढा। ऐसा करते हुए उन्होंने पृथ्वी को बहुत दूर तक खोद डाला।

प्रागुदीच्यां दिशि हयं ददृशुः कपिलान्तिके ।
एष वाजिहरश्चौर आस्ते मीलितलोचनः ॥ ९॥
हन्यतां हन्यतां पाप इति षष्टिसहस्रिणः ।
उदायुधा अभिययुरुन्मिमेष तदा मुनिः ॥ १०॥

शब्दार्थ

प्राक्-उदीच्याम्—उत्तरपूर्व; दिशि—दिशा में; हयम्—घोड़े को; ददृशुः—देखा; कपिल-अन्तिके—कपिल के आश्रम के निकट; एषः—यह रहा; वाजि-हरः—घोड़ा चुराने वाला; चौरः—चोर; आस्ते—स्थित; मीलित-लोचनः—आँखें बन्द किये; हन्यताम् हन्यताम्—मारो मारो; पापः—पापी पुरुष; इति—इस प्रकार; षष्टि-सहस्रिणः—सगर के साठ हजार पुत्र; उदायुधाः—अपने-अपने हथियार लिए; अभिययुः—पास आये; उन्मिमेष—अपनी आँखें खोलीं; तदा—उस समय; मुनिः—कपिल मुनि ने।

तत्पश्चात् जब उन्होंने उत्तरपूर्व दिशा में कपिल मुनि के आश्रम के निकट घोड़े को देखा तो वे

बोल उठे ''यह रहा घोड़ाचोर! यह आँखें बन्द किये बैठा है। यह निश्चय ही बड़ा पापी है। इसे मारो, मारो।'' इस प्रकार चिल्लाते हुए सगर के साठ हजार पुत्रों ने एकसाथ अपने हथियार उठा लिये। जब वे मुनि के निकट पहुँचे तो मुनि ने अपनी आँखें खोलीं।

स्वशरीराग्निना तावन्महेन्द्रहृतचेतसः ।
महद्व्यतिक्रमहता भस्मसादभवन्क्षणात् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

स्व-शरीर-अग्निना—अपने शरीरों से निकली अग्नि से; तावत्—तुरन्त; महेन्द्र—इन्द्र की चाल से; हृत-चेतसः—जिनकी बुद्धि हर ली गई है; महत्—महापुरुष; व्यतिक्रम-हताः—अपमान के कारण पराजित; भस्मसात्—जलकर राख; अभवन्—हो गये; क्षणात्—क्षणभर में।

स्वर्ग के राजा इन्द्र के प्रभाव से सगर के पुत्रों की बुद्धि मारी गई जिससे उन्होंने एक महापुरुष का अपमान कर दिया। फलस्वरूप उनके शरीरों से अग्नि निकलने लगी और वे तुरन्त जलकर राख हो गये।

तात्पर्य : यह भौतिक शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश का मेल है। शरीर के भीतर पहले से अग्नि रहती है और हमें इसका अनुभव है कि इस अग्नि का ताप घटता-बढ़ता रहता है। सगर महाराज के पुत्रों के शरीरों के भीतर की अग्नि इतनी दग्ध हो उठी कि वे सब भस्म हो गए। एक महापुरुष के प्रति दुर्व्यवहार के कारण अग्नि का ताप बढ़ गया था। ऐसा दुर्व्यवहार *महद्-व्यतिक्रम* कहलाता है। वे सभी अपने शरीरों की अग्नि से मर गए क्योंकि उन्होंने महापुरुष का अपमान किया था।

न साधुवादो मुनिकोपभर्जिता
नृपेन्द्रपुत्रा इति सत्त्वधामनि ।
कथं तमो रोषमयं विभाव्यते
जगत्पवित्रात्मनि खे रजो भुवः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; साधु-वादः—विद्वान पुरुषों का मत; मुनि-कोप—कपिल मुनि के क्रोध से; भर्जिताः—जल कर राख हो गए; नृपेन्द्र-पुत्राः—सगर महाराज के सारे पुत्र; इति—इस प्रकार; सत्त्व-धामनि—कपिल मुनि में, जिनमें सतोगुण प्रधान था; कथम्—कैसे; तमः—तमोगुण; रोष-मयम्—क्रोध के रूप में; विभाव्यते—प्रकट हो सकता है; जगत्-पवित्र-आत्मनि—उसमें, जिसका शरीर सारे संसार को पवित्र कर सकता है; खे—आकाश में; रजः—धूल; भुवः—पार्थिव।

कभी-कभी यह तर्क दिया जाता है कि राजा सगर के सारे पुत्र कपिल मुनि की आँखों से निकली अग्नि से भस्मसात् हुए थे। लेकिन विद्वान पुरुष इस मत की पुष्टि नहीं करते क्योंकि कपिल

मुनि का शरीर नितान्त सात्विक था अतएव उससे क्रोध के रूप में तमोगुण प्रकट नहीं हो सकता जिस तरह निर्मल आकाश को पृथ्वी की धूल दूषित नहीं कर सकती।

यस्येरिता साङ्ख्यमयी दृढेह नौ-
र्यया मुमुक्षुस्तरते दुरत्ययम् ।
भवार्णवं मृत्युपथं विपश्चितः
परात्मभूतस्य कथं पृथङ्मतिः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

यस्य—जिसके द्वारा; ईरिता—बतलाया गया; साङ्ख्य-मयी—भौतिक संसार का विश्लेषण करते हुए सांख्य दर्शन के रूप में; दृढा—अत्यन्त प्रबल (इस जगत से लोगों का उद्धार करने के लिए); इह—इस जगत में; नौः—नाव; यया—जिससे; मुमुक्षुः—मोक्ष की कामना करने वाला व्यक्ति; तरते—पार कर सकता है; दुरत्ययम्—दुर्लंघ्य; भव-अर्णवम्—अज्ञान के समुद्र को; मृत्यु-पथम्—बारम्बार जन्म-मृत्यु का जीवन; विपश्चितः—विद्वान पुरुष का; परात्म-भूतस्य—दिव्य पद को प्राप्त; कथम्—कैसे; पृथक्-मतिः—(मित्र तथा शत्रु का) भेदभाव।

कपिल मुनि ने इस जगत में सांख्य दर्शन का प्रवर्तन किया जो अज्ञानरूपी सागर को पार करने के लिए दृढ़ नाव है। निस्सन्देह, भवसागर को पार करने के इच्छुक व्यक्ति को इस दर्शन का आश्रय ग्रहण करना चाहिए। ऐसे महापुरुष में, जो अध्यात्म के उच्चपद को प्राप्त हो, एक मित्र तथा शत्रु में कोई अन्तर कैसे हो सकता है?

तात्पर्य : जो दिव्य पद को प्राप्त होता है (*ब्रह्मभूत*) वह सदैव प्रसन्न रहता है (*प्रसन्नात्मा*)। वह इस संसार में अच्छे तथा बुरे के मिथ्या अन्तर से अप्रभावित रहता है। अतएव ऐसा महान् पुरुष *समः सर्वेषु भूतेषु* होता है। वह प्रत्येक व्यक्ति के साथ समता का व्यवहार करता है और मित्र एवं शत्रु के बीच भेदभाव नहीं बर्तता। चूँकि वह भौतिक कल्मष से रहित परम पद पर होता है इसलिए वह *परात्म-भूत* या *ब्रह्मभूत* कहलाता है। इसलिए कपिल मुनि महाराज सगर के पुत्रों पर तनिक भी क्रुद्ध नहीं थे; प्रत्युत वे सभी अपने शरीर के ताप से भस्मसात् हो गये।

योऽसमञ्जस इत्युक्तः स केशिन्या नृपात्मजः ।
तस्य पुत्रोऽंशुमान्नाम पितामहहिते रतः ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

यः—सगर का एक पुत्र, जो; असमञ्जसः—असमंजस नामक; इति—इस तरह; उक्तः—ज्ञात; सः—वह; केशिन्याः—राजा सगर की अन्य पत्नी केशिनी के गर्भ से; नृप-आत्मजः—राजा का पुत्र; तस्य—उसका; पुत्रः—पुत्र; अंशुमान् नाम—अंशुमान के रूप में ज्ञात था; पितामह-हिते—अपने बाबा सगर महाराज के हित में; रतः—सदा लगा हुआ।

महाराज सगर के पुत्रों में एक का नाम असमंजस था जो राजा की दूसरी पत्नी केशिनी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। असंमजस का पुत्र अंशुमान था और वह अपने बाबा सगर महाराज के कल्याण-कार्य में सदैव लगा रहता था।

असमञ्जस आत्मानं दर्शयन्नसमञ्जसम् ।
जातिस्मरः पुरा सङ्गाद्योगी योगाद्विचालितः ॥ १५ ॥
आचरन्गर्हितं लोके ज्ञातीनां कर्म विप्रियम् ।
सरय्वां क्रीडतो बालान्प्रास्यदुद्वेजयञ्जनम् ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

असमञ्जसः—सगर महाराज का पुत्र; आत्मानम्—स्वयं; दर्शयन्—प्रकट करते हुए; असमञ्जसम्—अत्यन्त विक्षुब्धकारी; जाति-स्मरः—अपने विगत जीवन को स्मरण रखने में समर्थ; पुरा—प्राचीन काल में; सङ्गात्—बुरी संगति से; योगी—योगी होते हुए भी; योगात्—योग पथ से; विचालितः—नीचे गिर गया; आचरन्—आचरण; गर्हितम्—अशोभनीय; लोके—समाज में; ज्ञातीनाम्—अपने सम्बन्धियों का; कर्म—कार्य; विप्रियम्—अधिक अनुकूल नहीं; सरय्वाम्—सरयू नदी में; क्रीडतः—खेल में रत; बालान्—सारे लड़कों को; प्रास्यत्—फेंक देता; उद्वेजयन्—कष्ट देता हुआ; जनम्—सामान्य लोगों को।

पिछले जन्म में असमंजस एक महान् योगी था, किन्तु कुसंगति के कारण वह अपने उच्चपद से नीचे गिर गया था। अब, इस जन्म में वह राजपरिवार में उत्पन्न हुआ था और जाति-स्मर था अर्थात् वह अपने पूर्वजन्म को स्मरण करने में समर्थ था। फिर भी वह अपने आपको दुर्जन के रूप में दिखलाना चाहता था; अतएव वह ऐसा कार्य किया करता था जो जनता तथा उसके परिजनों की दृष्टि में गर्हित तथा प्रतिकूल होता। वह सरयू नदी में खेल करते बालकों को गहरे जल में फेंककर उन्हे तगं करता रहता था।

एवं वृत्तः परित्यक्तः पित्रा स्नेहमपोह्य वै ।
योगैश्वर्येण बालांस्तान्दर्शयित्वा ततो ययौ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

एवम् वृत्तः—इस प्रकार (गर्हित कार्यों में) व्यस्त; परित्यक्तः—निकाला हुआ; पित्रा—पिता द्वारा; स्नेहम्—स्नेह; अपोह्य—त्यागकर; वै—निस्सन्देह; योग-ऐश्वर्येण—योगशक्ति से; बालान् तान्—उन बालकों को जो जल में गिराए गए थे और मारे गए थे; दर्शयित्वा—उनके माता पिता को फिर से दिखलाकर; ततः ययौ—उस स्थान से चला गया।

चूँकि असमंजस ऐसे गर्हित कार्यों में लगा रहता था अतएव उसके पिता ने उससे स्नेह करना छोड़ दिया और उसे घर से निकाल दिया। तब असमंजस ने उन बालकों को जीवित करके उन्हें राजा तथा उनके माता-पिताओं को दिखलाकर अपनी योगशक्ति का प्रदर्शन किया। तत्पश्चात् असमंजस ने

अयोध्या छोड़ दिया।

तात्पर्य : असमंजस जातिस्मर था। उसे अपनी योगशक्ति से अपनी पूर्वचेतना भूली नहीं थी। अतएव वह मृत को जिला सकता था। मृत बालकों के प्रति अद्‌भुत कृत्य करके उसने निश्चय ही, राजा तथा जनता का ध्यान आकृष्ट किया और फिर तुरन्त वहाँ से चला गया।

अयोध्यावासिनः सर्वे बालकान्पुनरागतान् ।
दृष्ट्वा विसिस्मिरे राजन्राजा चाप्यन्वतप्यत ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

अयोध्या-वासिनः—अयोध्या के निवासी; सर्वे—सारे; बालकान्—उनके पुत्र; पुनः—फिर; आगतान्—पुनः जीवित होकर; दृष्ट्वा—इसे देखकर; विसिस्मिरे—स्तम्भित हो गये; राजन्—हे राजा परीक्षित; राजा—राजा सगर ने; च—भी; अपि—निस्सन्देह; अन्वतप्यत—(अपने पुत्र की अनुपस्थिति के लिए) अत्यन्त शोक किया।

हे राजा परीक्षित, जब सारे अयोध्यावासियों ने देखा कि उनके लड़के पुनः जीवित हो उठे हैं तो वे स्तम्भित रह गये और राजा सगर को अपने पुत्र की अनुपस्थिति पर अत्यधिक पश्चाताप हुआ।

अंशुमांश्चोदितो राज्ञा तुरगान्वेषणे ययौ ।
पितृव्यखातानुपथं भस्मान्ति ददृशे हयम् ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

अंशुमान्—असमंजस का पुत्र; चोदितः—आदेश पाकर; राज्ञा—राजा से; तुरग—घोड़ा; अन्वेषणे—खोजने के लिए; ययौ—बाहर चला गया; पितृव्य-खात—जैसा कि चाचा लोगों ने वर्णन किया था; अनुपथम्—उस रास्ते से जाकर; भस्म-अन्ति—राख के ढेर के निकट; ददृशे—उसने देखा; हयम्—घोड़े को।

तत्पश्चात् महाराज सगर ने अपने पौत्र अंशुमान को घोड़ा ढूँढ लाने का आदेश दिया। अंशुमान अपने चाचाओं के पथ से होकर धीरे-धीरे राख के ढेर तक पहुँचा और उसने उसी के निकट घोड़े को पाया।

तत्रासीनं मुनिं वीक्ष्य कपिलाख्यमधोक्षजम् ।
अस्तौत्समाहितमनाः प्राञ्जलिः प्रणतो महान् ॥ २० ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; आसीनम्—आसन ग्रहण किये; मुनिम्—मुनि को; वीक्ष्य—देखकर; कपिल-आख्यम्—कपिल मुनि के रूप में ज्ञात; अधोक्षजम्—विष्णु के अवतार; अस्तौत्—प्रार्थना की; समाहित-मनाः—बड़े ध्यान से; प्राञ्जलिः—हाथ जोड़कर; प्रणतः—नीचे गिरकर, नमस्कार करते हुए; महान्—महापुरुष अंशुमान ने।

महान् अंशुमान ने विष्णु अवतार कपिल नामक मुनि को देखा जो घोड़े के निकट आसीन थे।

अंशुमान ने उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार किया और दत्तचित्त होकर उनकी प्रार्थना की।

अंशुमानुवाच
न पश्यति त्वां परमात्मनोऽजनो
न बुध्यतेऽद्यापि समाधियुक्तिभिः ।
कुतोऽपरे तस्य मनःशरीरधी-
विसर्गसृष्टा वयमप्रकाशाः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

अंशुमान् उवाच—अंशुमान ने कहा; न—नहीं; पश्यति—देख सकता है; त्वाम्—आपको; परम्—दिव्य; आत्मनः—हम जीवों का; अजनः—ब्रह्मा; न—नहीं; बुध्यते—समझ सकता है; अद्य अपि—आज भी; समाधि—ध्यान से; युक्तिभिः—या चिन्तन से; कुतः—कैसे; अपरे—अन्य; तस्य—उसका; मनः-शरीर-धी—जो शरीर या मन को स्वयं (आत्मा) मानते हैं; विसर्ग-सृष्टाः—इस संसार के प्राणी; वयम्—हम; अप्रकाशाः—दिव्य ज्ञान से रहित।

अंशुमान ने कहा : हे भगवान्, आज तक ब्रह्माजी भी आपके अगम्य पद को ध्यान या चिन्तन द्वारा समझ पाने में असमर्थ हैं तो हम जैसों की कौन कहे जो ब्रह्मा द्वारा देवता, पशु, मनुष्य, पक्षी तथा पशु इत्यादि के विविध रूपों में उत्पन्न किये गये हैं? हम पूरी तरह अज्ञान में हैं। अतएव हम साक्षात् ब्रह्म स्वरूप आपको कैसे जान सकते हैं?

तात्पर्य : इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।

सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप॥

''हे भरतवंशी (अर्जुन), हे शत्रु के विजेता! सारे जीव मोह में उत्पन्न होते हैं, वे इच्छा तथा घृणा के द्वैत से पराजित होते हैं।'' (*भगवद्गीता* ७.२७)। इस जगत के सारे जीव प्रकृति के तीन गुणों से प्रभावित होते हैं। यहाँ तक कि ब्रह्माजी भी सतोगुणी हैं। इसी प्रकार देवता प्रायः रजोगुणी हैं तथा देवताओं से नीचे के जीव यथा मनुष्य तथा पशु तमोगुणी या सतो, रजो और तमो गुणों के मिश्रण होते हैं। अतएव अंशुमान बताना चाहता था कि उनके सारे चचा जो भस्म हो गये थे, प्रकृति के गुणों के अधीन होने के कारण कपिलदेव मुनि को समझ नहीं पाये। उसने प्रार्थना की ''चूँकि आप ब्रह्माजी की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष बुद्धि से भी परे हैं अतएव जब तक आप हमें ज्ञान न दें हम आपको समझने में असमर्थ हैं।''

अथापि ते देव पदाम्बुजद्वयप्रसादलेशानुगृहीत एव हि।

जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन्॥

''हे प्रभु! जिस पर आपके चरणकमलों की किञ्चिन्मात्र भी कृपा हो जाती है वह आपकी महानता को

समझ सकता है। किन्तु जो भगवान् को समझने के लिए चिन्तन करते हैं वे चाहे वेदों का वर्षों तक अध्ययन क्यों न करें आपको समझ नहीं पाते।'' (*भागवत* १०.१४.२९)। भगवान् को वही समझ सकता है जिस पर उनकी कृपा हो; अन्य लोग उन्हें नहीं समझ सकते।

ये देहभाजस्त्रिगुणप्रधाना
गुणान्विपश्यन्त्युत वा तमश्च ।
यन्मायया मोहितचेतसस्त्वां
विदुः स्वसंस्थं न बहिःप्रकाशाः ॥ २२॥

शब्दार्थ

ये—जिन पुरुषों ने; देह-भाजः—भौतिक शरीर धारण किया है; त्रि-गुण-प्रधानाः—भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों द्वारा प्रभावित; गुणान्—तीनों गुणों की अभिव्यक्ति; विपश्यन्ति—केवल देख सकते हैं; उत—ऐसा कहा जाता है; वा—अथवा; तमः—तमोगुण; च—और; यत्-मायया—जिसकी माया से; मोहित—मोहित; चेतसः—जिनके हृदय; त्वाम्—आपको; विदुः—जानते हैं; स्व-संस्थम्—अपने शरीर में स्थित; न—नहीं; बहिः-प्रकाशाः—जो केवल बहिरंगा शक्ति के फलों को देख पाते हैं।

हे स्वामी, आप सबों के हृदयों मे भलीभाँति स्थित हैं, किन्तु भौतिक शरीर से आवृत सारे जीव आपको नहीं देख पाते क्योंकि वे त्रिगुणमयी माया द्वारा प्रेरित बहिरंगा शक्ति के द्वारा प्रभावित रहते हैं। उनकी बुद्धि सतो, रजो तथा तमो गुणों से ढकी होने से वे प्रकृतिके इन तीनों गुणों की क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं को ही देख पाते हैं। तमोगुण की क्रिया-प्रतिक्रियाओं के कारण जाग्रत या सुप्त जीव प्रकृति की कार्यविधि को ही देख पाते हैं; वे आप (भगवान्) को नहीं देख सकते।

तात्पर्य : भगवान् की प्रेमाभक्ति में स्थित हुए बिना प्रत्येक मनुष्य भगवान् को समझने में असमर्थ रहता है। भगवान् हरएक के हृदय में स्थित हैं। किन्तु बद्धजीव प्रकृति द्वारा प्रभावित होने के कारण उसके कर्मों तथा फलों को ही देख पाते हैं, भगवान् को नहीं। अतएव मनुष्य को भीतर-बाहर से अपने आपको पवित्र बनाना चाहिए।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

अपने आप को बाहर से स्वच्छ रखने के लिए हमें तीन बार स्नान करना चाहिए और आन्तरिक शुद्धि के लिए हमें हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन करके अपने हृदय को शुद्ध करना चाहिए। कृष्णभावनामृत आन्दोलन के सारे सदस्यों को इस नियम (*बाह्याभ्यन्तर शुचिः*) का सदैव पालन करना चाहिए। तभी एक दिन

भगवान् का साक्षात्कार हो सकेगा।

तं त्वां अहं ज्ञानघनं स्वभाव-
प्रध्वस्तमायागुणभेदमोहैः ।
सनन्दनाद्यैर्मुनिभिर्विभाव्यं
कथं विमूढः परिभावयामि ॥ २३॥

शब्दार्थ

तम्—उस; त्वाम्—आपको; अहम्—मैं; ज्ञान-घनम्—घनीभूत ज्ञान स्वरूप आप; स्वभाव—स्वभाव से; प्रध्वस्त—कल्मषरहित; माया-गुण—तीन गुणों से उत्पन्न; भेद-मोहैः—भेदरूपी मोह के प्रदर्शन द्वारा; सनन्दन-आद्यैः—चारों कुमारों जैसे व्यक्तियों द्वारा; मुनिभिः—ऐसे मुनियों द्वारा; विभाव्यम्—पूज्य; कथम्—कैसे; विमूढः—प्रकृति द्वारा मूर्ख बनाया गया; परिभावयामि—आपके विषय में सोच सकता हूँ।

हे प्रभु, प्रकृति के तीनों गुणों के प्रभाव से मुक्त हुए साधुपुरुष, यथा चारों कुमार (सनत्, सनक, सनन्दन तथा सनातन) ही ज्ञान के पुंज आपके विषय में सोच सकते हैं। भला मुझ जैसा अज्ञानी व्यक्ति आपके विषय में कैसे सोच सकता है?

तात्पर्य : स्वभाव शब्द किसी के निजी आध्यात्मिक स्वभाव या मूल स्थिति को बताता है। अपनी मूल स्थिति पर रहकर जीव प्रकृति के गुणों से अप्रभावित रहता है। *स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते* (*भगवद्गीता* १४.२६)। तीनों गुणों के प्रभाव से मुक्त होते ही वह ब्रह्म पद पर आसीन हो जाता है। चारों कुमार तथा नारद इसी प्रकार के पद पर स्थित पुरुषों के स्पष्ट उदाहरण हैं। ऐसे महापुरुष स्वभाव से भगवान् की स्थिति को समझ सकते हैं लेकिन प्रकृति के प्रभाव से मुक्त न होने के कारण बद्धजीव ब्रह्म की अनुभूति नहीं कर सकता। इसीलिए *भगवद्गीता* (२.४५) में कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं—*त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन*—मनुष्य को तीनों गुणों के प्रभाव से ऊपर उठना चाहिए। जो तीनों गुणों के प्रभाव में बना रहता है वह भगवान् को समझने में असमर्थ रहता है।

प्रशान्त मायागुणकर्मलिङ्ग-
मनामरूपं सदसद्विमुक्तम् ।
ज्ञानोपदेशाय गृहीतदेहं
नमामहे त्वां पुरुषं पुराणम् ॥ २४॥

शब्दार्थ

प्रशान्त—हे पूर्णतया शान्त; माया-गुण—प्रकृति के गुण; कर्म-लिङ्गम्—सकाम कर्मों से जाना जाने वाला; अनाम-रूपम्—जिसके कोई नाम या रूप न हो; सत्-असत्-विमुक्तम्—प्रकृति के व्यक्त तथा अव्यक्त गुणों से परे; ज्ञान-उपदेशाय—दिव्य ज्ञान (यथा

भगवद्गीता का) वितरित करने के लिए; गृहीत-देहम्—जिसने शरीर धारण किया है; नमामहे—मैं नमस्कार करता हूँ; त्वाम्—तुमको; पुरुषम्—परमपुरुष को; पुराणम्—आदि।

हे परम शान्तिमय स्वामी, यद्यपि यह प्रकृति, सारे सकाम कर्म तथा उनके फलस्वरूप भौतिक नाम तथा रूप आपकी सृष्टि हैं, तथापि आप उनसे अप्रभावित रहते हैं। अतएव आपका दिव्य नाम भौतिक नामों से भिन्न है और आपका स्वरूप भौतिक स्वरूपों से भिन्न है। आप *भगवद्गीता* जैसे ज्ञान का हमें उपदेश देने के लिए ही भौतिक शरीर के ही समान रूप धारण करते हैं लेकिन वस्तुतः आप रहते हैं परम आदि पुरुष ही। अतएव मैं आपको सादर नमस्कार करता हूँ।

तात्पर्य : श्रील यामुनाचार्य ने अपने *स्तोत्र-रत्न* में (४३) निम्नलिखित श्लोक दिया है—

भवन्तम् एवानुचरन् निरन्तरः

प्रशान्तनिःशेषमनोरथान्तरः ।

कदाहमैकान्तिकनित्यकिंकरः

प्रहर्षयिष्यामि सनाथजीवितम् ॥

"आपकी नित्य सेवा करने से मनुष्य सभी भौतिक इच्छाओं से मुक्त हो जाता है और पूर्णतया शान्त रहता है। हे भगवान्! वह समय कब आयेगा जब मैं आपका स्थायी नौकर बनकर और आप जैसा उपयुक्त स्वामी पाकर सदैव प्रसन्न रह सकूँगा?"

मनोरथेनासति धावतो बहिः—जो मनोरथ स्तर पर कर्म करता है उसे भौतिक कार्यकलापों पर उतरकर आना होगा। किन्तु भगवान् तथा उनके शुद्ध भक्तों में भौतिक कल्मष सर्वथा अनुपस्थित रहता है। इसीलिए भगवान् को *प्रशान्त*—भौतिक स्तर के अवरोधों से पूर्णतया मुक्त—कहकर सम्बोधित किया गया है। परमेश्वर का कोई भौतिक नाम या रूप नहीं है, केवल मूर्ख ही सोचते हैं कि भगवान् का नाम और रूप भौतिक है (*अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्*)। भगवान् की पहचान तो इतनी ही है कि वे आदि पुरुष हैं; तो भी अल्पज्ञानी सोचते हैं कि भगवान् रूपहीन हैं। वे भौतिक दृष्टि से रूपहीन हैं, किन्तु उनका रूप दिव्य है (*सच्चिदानन्दविग्रह*)।

त्वन्मायारचिते लोके वस्तुबुद्ध्या गृहादिषु ।
भ्रमन्ति कामलोभेर्ष्यामोहविभ्रान्तचेतसः ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

त्वत्-माया—आपकी माया से; रचिते—निर्मित; लोके—इस जगत में; वस्तु-बुद्ध्या—वास्तविक मानते हुए; गृह-आदिषु—घर आदि में.; भ्रमन्ति—घूमते हैं; काम—विषयवासनाओं से; लोभ—लालच से; ईर्ष्या—द्वेष से; मोह—तथा मोह से; विभ्रान्त—मोहग्रस्त; चेतसः—जिनके हृदय।

हे भगवन्, जिनके मन काम, लोभ, ईर्ष्या तथा मोह से मोहित हैं वे आपकी माया द्वारा सृजित इस जगत में झूठे ही घर, गृहस्थी आदि में रुचि रखते हैं। वे घर, पत्नी तथा सन्तान में आसक्त रहकर इसी जगत में निरन्तर घूमते रहते हैं।

अद्य नः सर्वभूतात्मन्कामकर्मेन्द्रियाशयः ।
मोहपाशो दृढश्छिन्नो भगवंस्तव दर्शनात् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

अद्य—आज; नः—हमारा; सर्व-भूत-आत्मन्—हे परमात्मा स्वरूप; काम-कर्म-इन्द्रिय-आशयः—कामवासनाओं तथा सकाम कर्मों के अधीन रहकर; मोह-पाशः—मोह की यह कठिन ग्रन्थि; दृढः—अत्यन्त प्रबल; छिन्नः—टूट गई; भगवन्—हे भगवान्; तव दर्शनात्—आपके दर्शन मात्र से।

हे समस्त जीवों के परमात्मा, हे भगवान्, मैं अब आपके दर्शनमात्र से सारी कामवासनाओं से मुक्त हो गया हूँ जो दुर्लंघ्य मोह तथा संसार-बन्धन के मूल कारण हैं।

श्रीशुक उवाच
इत्थं गीतानुभावस्तं भगवान्कपिलो मुनिः ।
अंशुमन्तमुवाचेदमनुग्राह्य धिया नृप ॥ २७॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; इत्थम्—इस तरह; गीत-अनुभावः—जिनकी महिमा का वर्णन किया जाता है; तम्—उस; भगवान्—भगवान्; कपिलः—कपिल ने; मुनिः—महान् साधु; अंशुमन्तम्—अंशुमान से; उवाच—कहा; इदम्—यह; अनुग्राह्य—दयालु होकर; धिया—ज्ञान के मार्ग सहित; नृप—राजा परीक्षित।

हे राजा परीक्षित, जब अंशुमान ने भगवान् का इस प्रकार महिमागायन किया तो महामुनि कपिल ने, जो विष्णु के सशक्त अवतार हैं, उस पर कृपालु होकर उसे ज्ञान का मार्ग बतलाया।

श्रीभगवानुवाच
अश्वोऽयं नीयतां वत्स पितामहपशुस्तव ।
इमे च पितरो दग्धा गङ्गाम्भोऽर्हन्ति नेतरत् ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

श्री-भगवान् उवाच—कपिल मुनि ने कहा; अश्वः—घोड़ा; अयम्—यह; नीयताम्—ले लो; वत्स—हे पुत्र; पितामह—अपने बाबा का; पशुः—यह पशु; तव—तुम्हारे; इमे—ये सारे; च—भी; पितरः—पूर्वजों के शरीर; दग्धाः—भस्म हुए; गङ्गा-अम्भः—गंगाजल; अर्हन्ति—उबारे जा सकते हैं; न—नहीं; इतरत्—किसी अन्य साधन से।

भगवान् कपिल ने कहा : हे प्रिय अंशुमान, यह रहा तुम्हारे बाबा द्वारा खोजा जा रहा यज्ञ-पशु। इसे लो। दग्ध हुए तुम्हारे इन पुरखों का उद्धार केवल गंगाजल से हो सकता है, किसी अन्य साधन से नहीं।

तं परिक्रम्य शिरसा प्रसाद्य हयमानयत् ।
सगरस्तेन पशुना यज्ञशेषं समापयत् ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

तम्—उस मुनि की; परिक्रम्य—परिक्रमा लगाकर; शिरसा—सिर के बल (प्रणाम करके); प्रसाद्य—उसे सन्तुष्ट करके; हयम्—घोड़े को; आनयत्—वापस ले आया; सगरः—राजा सगर ने; तेन—उस; पशुना—पशु से; यज्ञ-शेषम्—यज्ञ का अन्तिम संस्कार; समापयत्—सम्पन्न किया।

तत्पश्चात् अंशुमान ने कपिल मुनि की परिक्रमा की और अपना सिर झुकाकर उन्हें सादर नमस्कार किया। इस तरह उन्हें पूरी तरह सन्तुष्ट करके अंशुमान यज्ञ-पशु को वापस ले आया और महाराज सगर ने इस घोड़े से यज्ञ का शेष अनुष्ठान सम्पन्न किया।

राज्यमंशुमते न्यस्य निःस्पृहो मुक्तबन्धनः ।
और्वोपदिष्टमार्गेण लेभे गतिमनुत्तमाम् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

राज्यम्—अपना राज्य; अंशुमते—अंशुमान को; न्यस्य—देकर; निःस्पृहः—इच्छारहित; मुक्त-बन्धनः—भवबन्धन से पूरी तरह मुक्त; और्व-उपदिष्ट—और्व मुनि द्वारा आदेशित; मार्गेण—उस मार्ग का अनुसरण करके; लेभे—प्राप्त किया; गतिम्—गन्तव्य; अनुत्तमाम्—परम।

अंशुमान को अपने राज्य की बागडोर देकर तथा सारी भौतिक चिन्ता एवं बन्धन से मुक्त होकर सगर महाराज ने और्व मुनि के द्वारा उपदिष्ट साधनों का पालन करते हुए परम गति प्राप्त की।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कन्ध के अन्तर्गत ''भगवान् कपिलदेव से सगरपुत्रों की भेंट'' नामक आठवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।